भक्तिकाल के प्रमुख कवियों का पुनर्मूल्यांकन

डॉ. ओम प्रकाश त्रिपाठी
प्रा. लता शिरोडकर

श्रीमती पार्वती बाई चौगुले महाविद्यालय, मडगाँव, गोवा

विद्या प्रकाशन
सी, 449, गुजैनी, कानपुर – 22

ISBN : 81-88554-00-6

मूल्य : तीन सौ रुपये मात्र

पुस्तक	:	भक्तिकाल के प्रमुख कवियों का पुनर्मूल्यांकन
लेखक	:	डॉ. ओम प्रकाश त्रिपाठी एवं प्रा. लता शिरोडकर
प्रकाशक	:	विद्या प्रकाशन सी-449, गुजैनी, कानपुर – 22 दूरभाष : (0512) 2285003
संस्करण	:	प्रथम, 2004 ई.
मूल्य	:	300.00
शब्द सज्जा	:	आशीष ग्राफिक्स, पी. रोड. कानपुर
मुद्रक	:	अजित आफसेट, रामबाग, कानपुर

Bhaktikal Ke Pramukh Kaviyon Ka Punrmulyankan

By : *Dr. Om Prakash Tripathi & Prof. Lata Shirodekar*

Price : Rs. Three Hundred only

कबीर और कबीर-पंथ

डॉ० इशरत खान

पन्द्रहवीं शताब्दी के महान् संत एवं कवि कबीर का, हिन्दी साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनकी लोक कल्याणकारी वाणी का प्रभाव सम्पूर्ण भारत के विभिन्न अंचलों में पड़ने लगा था। उनकी मृत्यु के पश्चात् भी उनके विचारों एवं सिद्धान्तों का प्रभाव कम नहीं हुआ। उनके विचारों के आधार पर एक पंथ ही चल पड़ा, जिसे 'कबीर-पंथ' कहते हैं।

कबीर-पंथ का प्रवर्तक कौन था ? क्या कबीर ने कोई पंथ बनया था? या इनके शिष्यों ने कबीर-पंथ की स्थापना की थी। कबीर-साहित्य का यह अत्यन्त विवादास्पद विषय है। कबीर-वाङ्मय के सन्दर्भ में ही इस विषय पर विचार किया जाएगा।

इस सम्बन्ध में आचार्य शुक्ल की दो टिप्पणियाँ ध्यान देने योग्य हैं -

"कबीर ने जिस प्रकार एक निराकार ईश्वर के लिए भारतीय वेदान्त का पल्ला पकड़ा, उसी प्रकार निराकार ईश्वर की भक्ति के लिए सूफियों का प्रेमतत्त्व लिया और अपना निर्गुण पंथ धूमधाम से निकाला।"[1]

इसी सन्दर्भ में वे आगे कहते हैं -

"कबीर ने भारतीय ब्रह्मवाद के साथ सूफियों के भावात्मक रहस्यवाद, हठयोगियों के साधनात्मक रहस्यवाद और वैष्णवों के अहिंसावाद तथा प्रपत्तिवाद का मेल करके अपना पंथ खड़ा किया।"[2]

'जायसी-ग्रन्थावली' में कबीर-पंथ पर व्यंग्य करते हुए वे कहते हैं - - -

"जायसी बड़े भावुक, भगवद् भक्त थे और अपने में बड़े ही सिद्ध और पहुँचे हुए फकीर माने जाते थे, पर कबीरदास के समान अपना एक 'निराला-पंथ' निकालने का हौसला उन्होंने कभी न किया।"[3]

आचार्य शुक्ल का यह मत कबीर के प्रति संकीर्ण मनोवृत्ति का सूचक कहा जा सकता है। जो युग की विकृतियों पर प्रहार करता है, वह अपने नाम पर अलग पंथ की स्थापना किस तरह कर सकता है ? अथवा अपने शिष्यों को पंथ निर्माण की स्वीकृति कैसे दे सकता है ?

अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध कबीर-पंथ के विषय में लिखते हैं - - -

"1901 की जनसंख्या (मर्दुमशुमारी) की रिपोर्ट में कबीर पंथियों की संख्या 843171 लिखी गई है। मैं समझता हूँ कुछ न्यूनाधिक यही संख्या ठीक है। इनमें अधिकांश नीच जाति के हिन्दू हैं, उच्चवंश के हिन्दू नाममात्र हैं। 'गुरु' भी इस पंथ के अधिकांश नीचे वर्ण के ही हैं। त्यागी और गृहस्थ इनमें भी हैं, पर गृहस्थों की ही संख्या अधिक है। ये सब हिन्दू धर्म के ही शासन में हैं, और उसी की रीति और पद्धति को बरतते हैं। केवल धार्मिक सिद्धान्तों में कबीर-पंथ का अनुसरण करते हैं, यहाँ तक कि अनेक ऐसे हैं जो हिन्दू देवी-देवताओं तक को पूजते हैं। त्यागी निस्सन्देह अपने को हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों से अलग रखते हैं, और वे हिन्दू धर्म के क्रियाकलाप में नहीं 'फँसना' चाहते, किन्तु उनका यह संस्कार बना है कि वे हिन्दू हैं, इसलिए वे अनेक अवसरों पर हिन्दू क्रियाकलाप में फँसे भी दृष्टिगत होते हैं। परन्तु यह सत्य है कि कबीरपंथी साधु हिन्दू समाज से एक प्रकार से पृथक् से रहते हैं, उसमें उनकी यथेष्ट प्रतिपत्ति नहीं। इनका अपार हिन्दू धर्मसम्प्रदायों से कुछ वैमनस्य और द्वेष-सा रहता है।"[4]

हरिऔध जी के इस वक्तव्य से कहीं भी यह स्पष्ट नहीं होता है कि कबीर-पंथ का प्रवर्तक कौन था ? और इस पंथ का निर्माण कब हुआ ? हाँ ! इतना अवश्य पता चलता है कि उन्होंने कबीर-पंथियों को हिन्दू एवं वैष्णव धर्म से जोड़ने की भरसक कोशिश की है।

कबीर-पंथ के सन्दर्भ में हजारीप्रसाद द्विवेदी लिखते हैं - - - -

"कबीरदास हैरान होकर लोगों से कहा करते थे कि भई, यह भी अजब योग है कि महादेव के नाम पर पंथ चलाया जाता है। लोग बड़े-बड़े महन्त बनते हैं, हाट-बाजार में समाधि लगाते हैं और मौका पाते ही तोप-बन्दूक लेकर पिल पड़ते हैं। भला दत्तात्रेय ने भी कभी मवासियाँ (किले) तोड़ीं या चढ़ाई की थी, शुकदेव ने भी कभी तोप संग्रह किए थे, नारद ने भी कभी बंदूक दाग़ी थी ? अजीब है ये विरक्त जिनकी सोने की गद्दियाँ जगमगा रही हैं, हाथी-घोड़ों के ठाठ लगे हैं, करोड़पतियों की-सी शान है।"[5]

डॉ० धर्मवीर तथा कबीर-पंथियों का कहना है कि कबीर-पंथ के प्रवर्तक स्वयं कबीर थे- इस सन्दर्भ में जीवन यदु कहते हैं - - - -

"पंथाचार्यों और पंथियों का मानना है कि पंथ की स्थापना भले ही कबीर ने न की हो किन्तु पंथ रचना का आदेश कबीर ने अवश्य दिया।"[6]

डॉ० धर्मवीर के अनुसार - - -

"डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कबीर-पंथ को स्वीकार नहीं किया है जबकि अभिलाषदास कबीरपंथ में बाक़ायदा दीक्षित हुए हैं। मेरा सोचना यह है कि यदि हजारीप्रसाद द्विवेदी कबीर-पंथ को स्वीकार करते तो शायद वे अभिलाषदास की सोच के व्यक्ति होते। तुलना इसलिए की जा सकती है क्योंकि दोनों ब्राह्मण है - एक पंथ से बाहर और दूसरे पंथ के भीतर।"[7]

इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि कबीर स्वतन्त्रचेता सन्त थे। वे सत्य के अन्वेषी थे तथा निर्भीक वक्ता थे। पंथों एवं सम्प्रदायों के घोर विरोधी थे। उन्होंने अनेक स्थानों पर सम्प्रदाय प्रवर्तक साधुओं और महंतों की निन्दा भी की है। कबीर ने पंथ-निर्माता तथा विभिन्न प्रकार के साधुओं एवं महन्तों पर तीखा व्यंग्य किया है -

इस सन्दर्भ में रमैंजी से कुछ पंक्तियाँ उद्धृत की जा रही हैं -

ऐसा लोग न देखा भाई, भूला फिरै लिए गफिलाई।
महादेव को पंथ चलावै, ऐसो बड़ौ महंत कहावै।

'बीजक' 69 रमैंणी

किसी भी पंथ निर्माण के लिए नियम, उपनियम बनाये जाते हैं। उसमें तर्क, बुद्धि और पुस्तकों का आधार लिया जाता है। कबीर ने इस प्रकार का कोई भी प्रयास नहीं किया था। वह तो 'आँखिन देखी' पर विश्वास रखते हैं 'कागद लेखी' पर नहीं।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह स्पष्ट है कि कबीर के नाम पर पंथ अवश्य बनाया गया होगा, परन्तु कबीर के द्वारा नहीं, बल्कि उनके किसी शिष्य अथवा अनुयायी के द्वारा ही बनाया गया होगा। कबीर-पंथ का निर्माण कबीर के जीवनकाल में ही हुआ अथवा उनके देहावसान के बाद। इसका भी कोई निश्चित उल्लेख नहीं मिलता है। कबीर के निधनोपरान्त ही उनके समर्थकों ने कबीर-पंथ की स्थापना की होगी। कबीर एक प्रतिभाशाली और आत्मज्ञानी संते थे और उनके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर अनेक व्यक्तियों ने अपने को कबीर साहब का शिष्य कहना प्रारम्भ कर दिया होगा। यह भी सम्भव है कि कतिपय व्यक्तियों के व्यवहार से प्रसन्न होकर कबीर ने, उन्हें अपना प्रिय पात्र भी समझा होगा। किन्तु शिष्य बनाने और पंथ-निर्माण करने में बड़ा अन्तर होता है। पंथ बनाने में, अन्य पंथों से, अपने पंथ की श्रेष्ठता सिद्ध करने का भाव भी छिपा रहता है और उसमें कतिपय वाह्योपचारों को भी स्थान मिलने लगता है। कबीर का संत मत इतना सर्वव्यापी था कि इसे किसी सीमा में बाँध सकना असम्भव था।

अब एक जायज़ा कबीर-पंथ का भी ले लिया जाय। कबीर-पंथ का आविर्भाव कब हुआ ? कहाँ हुआ ? इसका प्रवर्तक कौन है ? इस सम्बन्ध में कुछ कहा नहीं जा सकता है। हाँ। इसके ऐतिहासिक विकास क्रम पर अवश्य प्रकाश डाला जा सकता है - - -

कबीर के चार प्रमुख शिष्य थे - जामूदास, भगवानदास, श्रुतिगोपाल और धर्मदास। इनके अतिरिक्त दो अन्य शिष्यों का भी नामोल्लेख मिलता है। ऐसा कहा जा सकता है कि इन्हीं शिष्यों में से एक अथवा अनेक ने कबीर-पंथ का प्रवर्तक किया होगा। "हरिऔध जी ने कबीर-पंथ की बारह (12) शाखाओं का उल्लेख किया है।"[8]

कबीर-पंथ की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शाखा काशी स्थित 'कबीरचौरा मठ' है। इसके प्रवर्तक कबीर के प्रिय शिष्य 'सुरतगोपाल' कहे जाते हैं। 'भक्ति पुष्पांजलि' के अनुसार "इनका पहले का नाम 'सर्वाजीत' था। वे दाक्षिणात्य ब्राह्मण थे। इनकी बुद्धि बड़ी कुशाग्र थी, अतः अल्पकाल में ही इन्होंने नाना शास्त्रों का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। कबीर से परास्त होकर इन्होंने, उन्हें गुरु रूप में स्वीकार कर लिया था। उसी समय से उनका नाम सुरतगोपाल या श्रुतिगोपाल पड़ा।"[9]

कबीर-चौरा की अनेक शाखाएँ हैं। उनमें कबीर चौरा मठ काशी, लहरतारा, मगहर, मुस्लिम कबीर-पंथी मठ, हिन्दू कबीर-पंथी मठ और कबीर-बाग गया आदि शाखाएँ प्रसिद्ध हैं। कबीर-चौरा के वर्तमान महन्त श्री गंगाशरण शास्त्री के अनुसार - "विक्रम सं० 1485 के आसपास स्वामी रामानन्दाचार्य आदेशानुसार सद्गुरु कबीर ने एक पर्णकुटी वर्तमान कबीरमठ के स्थान पर बनवाई। सद्गुरु कबीर साहेब के सत्यलोक गमनोपरान्त पं० श्री श्रुतिगोपाल साहब ने वि० सं० 1578 में पर्णशाला एवं समाधि को महाराजा वीरसिंह देव के सहयोग से स्थिर रूप प्रदान किया।"[10]

कबीर-पंथ की दूसरी महत्त्वपूर्ण शाखा 'छत्तीसगढ़ी शाखा' है। इसके प्रवर्तक धर्मदास माने जाते हैं। धर्मदास जाति से वैश्य थे। ये पहले मूर्तिपूजक थे परन्तु कबीर के सम्पर्क में आकर उन्होंने मूर्तिपूजा छोड़ दी थी। कबीर की मृत्यु के पश्चात् धर्मदास ने कबीर-पंथ की छत्तीस-गढ़ी शाखा का संचालन किया।

छपरा जिले में स्थित 'धनौती' नामक ग्राम में भगताही शाखा का प्रधान मठ है। भगवान गोस्वामी साहब इस शाखा के प्रथम आचार्य माने जाते हैं। इस शाखा का दूसरा महत्त्वपूर्ण केन्द्र बिहार प्रदेश के चम्पारन जनपद के चटिया-बड़हरवा नामक स्थान है। यहीं से भगताही शाखा का प्रचार-प्रसार होता है। भगताही आचार्य परम्परा में सत्रह (17) महन्तों के नाम उल्लेखनीय हैं।[11] सम्प्रति महंत रामरूप गोसाईं भगताही-पंथ के विकास में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

कबीर-पंथ का केन्द्र अवश्य ही उत्तर-भारत रहा है, परन्तु इसका व्यापक प्रचार-प्रसार मध्य एवं दक्षिण भारत में भी है। उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, गुजरात तथा महाराष्ट्र में कबीर-पंथियों की संख्या अधिक है। मद्रास, आसाम, बंगाल, पंजाब, कोचीन तथा कश्मीर में भी इसके अनेक अनुयायी हैं। विदेशों में भी अनेक कबीर-पंथ हैं। इनमें ट्रीनिडाड (अमेरिका) दक्षिण अफ्रीका, फीजी, लंका, मारीशस, ब्रिटिश गयाना, भूटान, नेपाल में कबीर-पंथी मठ तथा पंथ के अनुयायी हैं जो अपने कार्यक्षेत्र में सक्रिय हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आज भारत में ही नहीं, विदेशी में भी कबीर-पंथ एवं उनके अनुयायियों का साम्राज्य फैला हुआ है। कुछ कबीर-पंथ तो

कबीर के बताए हुए मार्ग पर चल रहे हैं और कबीर के सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार भी कर रहे हैं। परन्तु बहुत दुःख के साथ कहना पड़ता है कि अनेक कबीर-पंथ एवं उनके अनुयायी अपने मार्ग से भटक गये हैं। उन्होंने कबीर-पंथ तो बना लिया है लेकिन व्यावहारिक रूप से कबीर-पथ को नहीं अपना पाये हैं।

कबीर प्रेममार्ग के उपासक थे। उनका विश्वास था कि प्रेम द्वारा ही ईश्वर तक पहुँचा जा सकता है। उनके यहाँ प्रेम का रूप इतना व्यापक है कि जो ईश्वरीय सत्ता से मानवीय सत्ता तक फैला हुआ है लेकिन यह प्रेममार्ग सरल नहीं है - इस मार्ग को वही पार कर सकता है जो सिर काटकर अपने पैरों तले बिछा दे। निम्नलिखित साखियों में इसी प्रेम के महत्त्व को दर्शाया गया है - - -

कबीर निज घर प्रेम का, मारग अगम अगाध ।
सीस काटि पग तर धरै, तब निकटि प्रेम का स्वाद ॥[12]
कबीर यह घर प्रेम का, खाला का घर नाँहि ।
सीस उतारै हाथ सौं, तब पँसे घर माँहि ॥[13]
मारग कठिन कबीर का, धरि न सके पग कोय ।
आय चले कोई सूरमा, जा धड़ शीश न होय ॥

लेकिन आज कबीर पंथियों में ही प्रेम एवं सौहार्द का अभाव है। उनमें पारस्परिक ईर्ष्या भाव तथा संघर्ष की भावना जन्म ले रही है। केदारनाथ द्विवेदी के अनुसार - - -

"एक शाखा के कबीर-पंथी, दूसरी शाखा के कबीर-पंथियों को प्रायः हेय दृष्टि से देखते हैं और एक दूसरे की आलोचना-प्रत्यालोचना में भी अपना बहुमूल्य समय नष्ट किया करते हैं। कबीर पंथ की सभी शाखाएँ समन्वित शक्ति से पंथ-प्रचार का प्रयास नहीं करतीं।"[14]

कबीर ने जिन विसंगतियों का विरोध किया था। आज पंथ में वही विसंगतियाँ पुनः घुस गई हैं। कबीर ने वेद-पुराण को प्रमाण नहीं माना। पुराण के अवतारवाद पर भी उनकी आस्था नहीं थी। 'अवतार' का जोरदार शब्दों में खण्डन करने वाले कबीर को भी कबीरपंथियों ने अवतार-रूप में चित्रित किया है। 'अनुराग सागर' में कबीर द्वारा अनेक अवतार लिए जाने का वर्णन किया गया है। एक पंथीय ग्रन्थ में कबीर, धर्मदास से चारों युगों में अपने प्रकट होने की बात कहते हैं -

"युगन युगन लीन अवतारा। रहौ निरन्तर प्रकट पसारा ॥
सतयुग कह सत सुकृत हेरा। त्रेता नाम मुनींद्र है मेरा ॥
द्वापर में करुणामय कहाये। कलियुग नाम कबीर धराये ॥[15]

इसी सन्दर्भ में हरिऔध जी का कहना है -

"प्रायः कबीरपंथियों से यह सुना जाता है कि कबीर साहेब के ग्रन्थों में जो वेदशास्त्र अथवा अवतारों के विरुद्ध बातें पाई जाती हैं या असंगत भाव से खण्डन और आक्षेप देखा जाता है, वास्तव में वह उनके किसी शिष्य की ही करतूत है।"[16]

कबीरपंथियों ने, कबीर को चमत्कारिक एवं अवतारी पुरुष सिद्ध करने का जो प्रयास किया है, उससे तो सन्त कबीर का महत्त्व ही समाप्त-सा हो जाता है।

कबीरपंथ, कबीर के विचारों से भटककर नाना प्रकार के वाह्याचारों में उलझने लगा है। व्रत, उत्सव, चौका विधान, आरती, नारियल अर्पण की क्रिया तथा तिनका तोड़ना आदि आडम्बरों का समावेश कबीर पंथ में भी हो गया है। लेकिन कबीर ने ऐसे वाह्याडम्बरों की कड़ी आलोचना की है - कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं -

काँकर पाथर जोरि कै, मसजिद लई बनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहरो भयो खुदाय॥[17]

दुनिया ऐसी बावरी, पाथर पूजन जाय॥
घर की चकिया कोइ न पूजै, जाको पीसो खाय॥

जप तप दीसैं थोथरा, तीरथ व्रत बेसाल।
सूवै सैंबल सेविया, यौं जग चल्या निरास॥[18]

तीरथ करि करि जग मुवा, डूंधै पांणीं न्हाइ।
रांमहि रांम जपंत डां, काल घसीट्या जाइ॥[19]

माला फेरत जुग भया, पाय न मन का फेर।
कर का मन का छाँड़ि दे, मन का मन का फेर॥[20]

उपर्युक्त पंक्तियों का भाव यह है कि उपासना के वाह्याडम्बरों से मुक्ति सम्भव नहीं, उसके लिए हृदय से प्रभु-भक्ति वांछनीय है।

कबीर को धर्मग्रन्थों पर भी विश्वा नहीं था। वे तो रामनाम को ही सब कुछ समझते थे। लेकिन उन्हीं कबीर के काव्यसंग्रह 'बीजक' को, कबीरपंथी धर्मपुस्तक कहते हैं।[21]

कबीर का वैदिक मंत्रों पर भी विश्वास नहीं था। जड़-प्रतिमा में वेदमन्त्रों द्वारा प्राण-प्रतिष्ठा करने वालों पर व्यंग्य करते हुए वे कहते हैं — - -

करे प्रतिष्ठा वेद मंत्र से, तामें प्राण बुलावै।
जो वह मंत्र सत्य करि जाने, निज पितु क्यों न जिवावै॥

परन्तु आज कबीर पंथियों के जीवन में मंत्रों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रातः से सायं तक दैनिक कार्यों के लिए कोई न कोई मंत्र अवश्य है। छत्तीसगढ़ी शाखा के कबीरपंथी मंत्रों को सुमिरन कहते हैं। सुमिरन-बोध ग्रन्थ में प्रातःकाल शैय्या छोड़ने से लेकर सायंकाल शयन करने के पूर्व तक की समस्त क्रियाओं में पढ़े जाने वाले मंत्रों का उल्लेख किया गया है।

आज सम्पूर्ण विश्व में कबीर की छह सौवीं जयन्ती मनाई जा रही है। केन्द्र, राज्य सरकारें तथा अनेक कबीरपंथी, कबीर पर संगोष्ठी आयोजित कर रहे हैं। कबीर एवं उनके काव्य के विविध पक्षों पर गम्भीरता से चिन्तन, मनन हो रहा है, बहसें हो रही हैं, परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कबीर दलितों, शोषितों, बहिष्कृतों, अशिक्षितों और श्रमिक वर्ग से जुड़े हुए रचनाकार थे। वे उनके पक्षधर थे।

आज की विषम परिस्थितियों को देखते हुए उनके महत्त्वपूर्ण विचारों को हमें व्यावहारिक जीवन में अपनाना होगा। तभी सम्पूर्ण विश्व में शान्ति स्थापित हो सकेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास : पृ० सं० 44 (39वाँ संस्करण 2001)
2. वही : पृ० सं० 36
3. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : जायसी- ग्रन्थावली : पृ० सं० 10
4. विजयेन्द्र स्नातक (सम्पादक) : कबीर : पृ० सं० 33
5. हजारीप्रसाद द्विवेदी : कबीर : पृ० सं० 106
6. महावीर अग्रवाल (सम्पादक) : सापेक्ष (कबीर विशेषांक) 44-45 जनवरी-दिसम्बर 2000 : पृ० सं० 1143
7. डॉ० धर्मवीर : कबीर और रामानन्द (किंवदंतियाँ) : पृ० सं० 173
8. 1. श्रुत गोपालदास, 2. भग्गूदास, 3. नारायणदास, 4. चूड़ामणिदास, 5. जग्गूदास, 6. जीवनदास, 7. कमाल, 8. टकसाली, 9. ज्ञानी, 10. साहेबदास, 11. नित्यानन्द, 12. कमलानन्द।
   विजयेन्द्र स्नातक (सम्पादक) : कबीर : पृ० सं० 31-32
9. डॉ० केदारनाथ द्विवेदी : कबीर और कबीर पंथ : पृ० सं० 163
10. प्रभाकर श्रोत्रिय (सम्पादक) : वागर्थ मार्च -अप्रैल 2000 (कबीर विशेषांक), पृ० सं० 176
11. डॉ० शुकदेव सिंह : सन्त कबीर और भगताही पंथ : विषय क्रम
12. विद्यानिवास मिश्र (सम्पादक) : कबीर वचनामृत : पृ० सं० 30
13. वही : पृ० सं० 30
14. डॉ० केदारनाथ द्विवेदी : कबीर और कबीर पंथ : पृ० सं० 194
15. महावीर अग्रवाल : सापेक्ष : पृ० सं० 1147
16. विजयेन्द्र स्नातक (सम्पादक) : कबीर : पृ० सं० 34
17. प्रो० पुष्पपाल सिंह : कबीर ग्रन्थावली : पृ० सं० 63
18. डॉ० भगवतस्वरूप मिश्र : कबीर ग्रन्थावली : पृ० सं० 118
19. प्रो० पुष्पपाल सिंह : कबीर ग्रन्थावली : पृ० सं० 168
20. डॉ० श्यामसुन्दर दास : कबीर ग्रन्थावली : पृ० सं० 35
21. डॉ० शुकदेव सिंह : सन्त कबीर और भगताही पंथ : ('अपनी आप निबेर' शीर्षक से)